अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

"संजीव के उपन्यासों में लोक-सांस्कृतिक चित्रण"

शोधार्थी
रामसिंह यादव
हिन्दी विभाग पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़।

हिंदी उपन्यासों में जिस तरह से क्षेत्रीय संस्कृति या आंचलिकता को उभारने का प्रयत्न दिखाई देता है उसी तरह संजीव एक ऐसे रचनाकार हैं जिसमें लोक-संस्कृति के प्रति गहरी आस्था दिखाई देती है। त्योहार, मेले, उत्सव आदि ग्रामीण संस्कृति के आवश्यक अंग हैं उनका अनेक विधि वर्णन, ग्रामों में गाये जाने वाले गीतों, लोक-गीतों, विवाह, लोक-कथाओं, लोक-नृत्यों आदि प्रवृत्तियों का वर्णन सांस्कृतिक चित्रण के अंतर्गत आता है। गाँव में त्योहारों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। त्योहारों में ग्रामवासी सुन्दर, स्वच्छ वस्त्र पहनते हैं, स्वादिष्ट भोजन, पकवान बनाते हैं अपनी खुशी जाहिर करते हैं इन सब के मूल में धार्मिक भावना व लोकहित का उद्देश्य भी निहित होता है ये सब संस्कृति के अवयव हैं। मेले लोक-संस्कृति की एक महत्त्वपूर्ण परम्परा हैं। इसका आयोजन किसी विशेष अवसर या पर्व या अन्य सांस्कृतिक महत्त्व के दिन किया जाता है। ग्रामीण-जीवन के लिए ये मेले कई दृष्टियों से आकर्षण के केन्द्र होते हैं। रोजमर्रा की वस्तुएँ, जरूरतें, इन मेलों में आसानी से सुलभ होती हैं। लोकगीत, लोककथाएँ ग्रामीण जनता के लिएमनोरंजन का खजाना होते हैं। रीति-रिवाज परम्पराएँ सांस्कृतिक विशेषताओं को समेटे होते हैं, उत्सव और खेल ग्रामीण जनमानस के जीवन में हर्षोल्लास भरते हैं। इन्हीं सांस्कृतिक आयामों को संजीव के उपन्यास बयां करते हैं। संजीव उपन्यासों में सांस्कृतिक आयामों का चित्रण करते हैं। फाँस उपन्यास में मेले का वर्णन देखिए-"तप रहा है पूरा विदर्भ। बताते हैं ठीक ऊपर से गुजरती है तपती-काँपती हुई कर्क रेखा जैसे करंट वाली बाड़ हो! चौराहे पर मेला लगा हुआ है। कितने तो कार्यक्रम हैं गुरु

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

पूर्णिमा पर–अकेला आदमी कहाँ-कहाँ जाए? शीतल पूजा, लखाजी महाराज, बिट्ठल नाथ! कुछ लोग सन्त गाड़गे अंधश्रद्धा निर्मूलन वाले में जा रहे हैं।"[1]'मुझे पहचानो' उपन्यास में मेले का वर्णन करते हुए संजीव ने लिखा है कि-"सती थान कुछ दूर तक मेले में तब्दील हो गया था। औरतों के सिंदूर-टिकुली कंघी-चोटी, बच्चों के तरह-तरह के खिलौने, देहाती मिठाइयाँ आदि तमाम तरह के सामान बिक रहे थे। मुझे लव और कुश के लिए एक-एक डंका गाड़ी लेनी थी"।[2]'रानी की सराय' उपन्यास में मेले का वर्णन करते हैं-"इधर बरसात थमते ही अलगूपुर में एक बाल मेला और नुमाइश आ लगी। बच्चों के इस मेले में बहुत दूर-दूर के बच्चे भाग लेने आये थे। रानी की सराय के बच्चों के लिए अलगूपुर जाने का कोई सीधा रास्ता नहीं बचा था। एक किलोमीटर एक पगडण्डी जरूर थी।"[3]'रानी की सराय' उपन्यास में मेले का वर्णन करते हुए संजीव लिखते हैं-"अलगूपुर का बाल मेला ! भक-भक धुआँ उगलते जेनेटर ! बिजली की गोल पटरियों पर घूमनेवाले रेल। आकाश चरखी ! इस्पात, कोयला, कागज, कपड़े के मिलों के मण्डप। टेलीविजन और कई–कई प्रांतो की झाँकियाँ।....मेला देखने के लिए एक दिन मास्टर साहब स्वयं ले चलेंगे और दूसरे दिन अपने-अपने पिता या अभिभावक के साथ।..."यहाँ मेला क्या लगा, तुम लोग दुकान खोलकर बैठ गये ।""ब्रजबिहारी ने कहा और लोग उसके अनगढ़ खिलौने देखने लगे।"[4]

'जंगल जहाँ शुरू होता है'उपन्यास में रामनवमी का दिन है इस दिन सहोदरा माई की पूजा होती है और इस शुभ अवसर पर बहुत बड़े मेले का आयोजन किया जाता है। जिसमें दूर–दूर से प्रदेश के लोग शामिल होते हैं साथ ही इस मेले में डाकू तथा सामान्य लोग भी मेले में आते हैं। लेखक लिखता है कि-"कोई जत्था चनपटिया से चला आ रहा था, तो कोई नेपाल से, कोई रामनगर से तो कोई बगहा से, कोई सिर्फ अपने परिवार के साथ, तो कोई गाँव समेत

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

भैंसागाड़ियों, बैलगाड़ियों के अलावा, घोड़े, साइकिल, ट्रैक्टर, बस, जीप, मोटर साइकिल से भी, मगर ज्यादातर पाँव पैदल। सारी धाराएँ सहोदरा में आकर गिर रही थीं। मेले में लोग-ही- लोग मगर उनमें भी ज्यादातर थारू और थारूओं में भी ज्यादातर स्त्रियाँ। इस हिसाब से देखा जाय तो मन्दिर भी छोटा था और मेले का क्षेत्र- वह आम की बगिया भी, सो भीड़ और तमाशे और दुकानें बाहर तक छलक रही थीं।"[5]संजीव ने उपन्यासों में इस तथ्य के प्रति बड़ी संजीदगी दिखाई है कि आदिवासी संस्कृति विशिष्ट होती है। उनका पहाड़ी, जंगली जन-जीवन, दुरंत जीवन शक्ति, कठिन परिश्रम, रीति-नीतियों का निर्वाह, उनकी जीवन-प्रणाली कैसी है। यह भली-भाँति जानकर उनका समग्र रूपांकन संजीव का मुख्य ध्येय रहा है।लोक-संस्कृति में लोक तत्वों का मुख्य स्थान है इसमें क्षेत्र विशेष के रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार, खान-पान, रहन-सहन, जादू-टोने, अंधविश्वासादि का स्थान प्रमुख है। संजीव के उपन्यासों में रीति-रिवाज, लोक-गीत, लोक-कथा, लोक-नृत्य के वर्णन उपलब्ध होते हैं।

1. 'पुरबी बयार' उपन्यास में संजीव रीति-रिवाज का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि-"मिश्र की पाठशाला में आज कुछ नये छात्र आ रहे हैं। 'खली छुलाई' की रस्म पूरी हो रही है। छात्रों की पट्टी पर लिखा हुआ है-'राम गति देहुँ सुमति' सहसा यह प्रार्थना उछलकर छात्रों के कंठों पर आ बैठती है-'राम गति देहूँ सुमति' दूर से सुनाई पड़ती है सामूहिक प्रार्थना ! प्रार्थना की इसी डोर को पकड़कर आ पहुँचे हैं महेन्दर के पिता पाठशाला। नवागन्तुक छात्र अपने-अपने घरों से लाया है अक्षत (अरवा चावल), दूब, तुलसी, एक पैसा और एक पिंडी गुड़, गुरु जी के अंगोछे में उलट रहे हैं।"[6]

2. 'अहेर' उपन्यास मेंगीत का वर्णन करते हुए संजीव लिखते हैं-"करिंगा (जोकर) सोंटा हाथ में लिए हुए जैसे ही डोली गाँव से आगे बढ़ती वह ज़ोरों से आलाप भरता है–

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

आवइ द अगहनवाँ, कटइ द जड़हनवाँ
चिरई तोहका लेइ के ना,
छउबइ भिटवा पे मड़इया,
चिरई तोहका लेइ के ना।

पाँच साल की उम्र में ब्याही गई अपनी चिरई को लेकर किसी भीट पर मड़ई छाने की उनकी कल्पना गर्दिशों के ऊपर ही ऊपर पर मारा करती।"[7]**'पुरबी बयार'** उपन्यास में लोकगीत प्रचुर मात्रा में लिखे गए हैं। लेखक की लोकगीतों में बड़ी दिलचस्पी दिखाई देती है। संजीव लोकगीतों के बोल तक ही सीमित नहीं हैं अंतरा भी उन्हें पता है। उपन्यास में वर्णनदेखिए-

-(क)"सूतल पिया के जगा दे कोइलिया, तोरी मीठी बोलिया"[8]

(ख)-अँगुरी में डसले बिया नगिनिया हे.....,[9]

(ग)-"निंदिया लागी मैं सोइ गई गुइयाँ...।"[10]

(घ)-"खेलत रहली हम सुपुली मउनिया
ए ननदिया मोरी रे ।
आयी गइले डोलिया कहार।
नाहि मोर लूर ढ़ंग, एको न रहनवाँ
ए ननदिया मोरी रे
लइके चलेंले ससुरार..."[11]

(ङ)-"जेठ बइसखवा के तलफी भुभुरिया
ई ननदिया मोरी रे
चलत में पाउवाँ पिराय
ऐ ननदिया मोरी रे
अपने न अइलन पिया भेजे सनेसवा
ऐ ननदिया मोरी रे
भेज दिहले डोलिया कहार..."[12]

(च)-"भइल कौन मोसे कसूर
नजरिया से दूर कइल-अ बलमू ।"[13]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

(छ)-"सभका देला राम जी, अन धन सोनवा, बनवारी हो, हमरा के लइका भतार।

लाइका भतार लेई के सुतलीं आँगनवा, बनवारी हो, रहरी में बोले ला सियार..."[14]

(ज)-"पटना से बैदा बुलाइ द-अ, नज़रा गइली गुइँया।"

दूसरा गीत-"अमवा महुववा के डोले डलिया । तनी ताका ए बलमुआ हमार ओरिया...।"[15]**(झ)-**"हमनी के रहब जानी दूनों परानी...

खाले ऊँचे गोड़ परे चढ़लि बा जवानी।"[16]

(ञ)"अमवा महुवआ की डोले डलिया, तनि ताका ए बलमुवा हमार ओरिया।"

"भइल कौन मोसे कसूर...नजरिया से दूर कइला बलमू...."[17]

(ट)-"गंगा रे जमुनवा के चिकनी डगरिया

ए ननदिया मोरी रे, पउआँ धरत बिछलाय...!'[18]

(ठ)- शायद यह बनारस की कोई चैती है-"एहि ठइयाँ झुलनी भुलानी हो रामा, ऐहि ठइयाँ... सास से पूछूँ, ससुर जी से पूछूँ, देवरा से पूछत लजानी हो रामा...!'[19]

(ड)-"पनिया के जहाज से पलटनिया बनि

अइह-अ पिया, ले ले अइहा-हो

पिया सेन्दुर-अ बंगाल के ...'।"[20]

(ढ)- एक निर्गुण का वर्णन देखिए-

"सखि हो प्रेम नगरिया छूटल जात बा

जियरा मोर डेरात बा ना।
बाबू जी गइलें बाजार,
लेइके रुपया दुइ-चार
हमरा खातिर चुनरी खरीदाता।
काँचे बसवा कटायी
नया डोलिया बनायी
रहि-रहि डोली लचकत जात बा।
लगले चारगो कहार,

ले के चले साजन के द्वार...।"[21]संजीव सुन्दर फिल्मी गीतों का वर्णन करते हुए 'फाँस' उपन्यास में लिखते हैं कि-"बाहर अलबत्ता अशोक अपने मोबाइल के फिल्मी गीतों के साथ मँडरा रहा था-तेरी दुनिया से दूर चले होके मजबूर हमें याद रखना....। गीत शेष हो गया

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

था। उसे याद आया, इतने हल्के टेस्ट की तो है नहीं छोटी, ढूँढ़कर उसने लेकिन का लता का वह गीत चुना। जिसे महुए के पेड़ के नीचे सुना करते थे वे....।

यारॉं सीलीं सीलीं बिरहा की रात का जलना....

मौला सीलीं सीलीं....ये भी कोई जीना है, ये भी कोई मरना....पिछली गली में जाने क्या छोड़ आई मैं....मेरे संग जाए ना मेरी परछाईं रे...। चल रहा था।"[22]इस प्रकार संजीव लोकगीतों का वर्णन उपन्यासों में विशेष रुचि से करते हैं। लोक में प्रचलित ये गीत जनमानस का केवल मनोरंजन ही नहीं करते बल्कि रीति-रिवाजों एवं संस्कारों के वाहक भी हैं। समाज में चली आती परम्परा को सँजोए रखने का कार्य भी करते हैं। लोकगीत, लोक में अपनी अमृत रसधार से लोक मानस को भिगोते रहते हैं। लोक में यही लोकगीत, लोक-संस्कृति के प्रस्तुतीकरण का माध्यम बनते हैं। किसी भी क्षेत्र की लोक-संस्कृति में लोकगीतों की विशिष्टता देखी जा सकती है।

संजीव उपन्यासों विवाह का वर्णन करते हैंविवाह समाज मेंलोक-सांस्कृतिक विशेषताओं से परिपूर्ण होता है। इसमें लोक-संस्कृति के सारे आयाम दृश्यगत होते हैं। विवाह एक सामाजिक संस्था के रूप में कार्य करता है। विवाह संस्कार व्यक्ति के सामाजिक संबंधों में दृढ़ता प्रदान करता है। अतः विवाह संस्कार का लोक-सांस्कृतक दृष्टि से अत्यंत महत्त्व है। विवाह का चित्रण लगभग सभी उपन्यासों में दिखाई देता है। कुछ-एक-दो उदाहरणों से स्पष्ट करना लाजमी है।

3.'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास में दूबे जी की बेटी के विवाह का वर्णन है देखिए-"किवाड़ खुलते ही मांगलिक शहनाई की आवाज विवाह की उद्घोषणा करती है-पीं-ई-ई ! पीं-ई-ई-ई, पिपि पीं-ई-ई,ई-ई-ई ! सुन्दर सजे पंडाल में झाड़-फानूस, पँखे और बेंत के फर्नीचर। गेंदे, गुलाब, बेले और रजनीगंधा की झालरें और तोरण। सारा कुछ भव्य और आभिजात्य भरा। कतार बद्ध कुर्सियों पर बैठे मंत्री, सेठ, ठेकेदार और आला अफसर। दूबे जी के अन्य अंगरक्षकों के साथ अंगरक्षक बनकर चल रहा है कुमार। सतर्क नजरें आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ, ऊपर-नीचे सबको टटोलते हुई। दूबे जी विशिष्ट अतिथियों से मिलते हुए परिक्रमा पूरी करते हैं। एक नजर जनवासे के मंडपों को देख लेना ठीक होता। बाहर से ही देखकर संतुष्ट होकर लौट आते है; पाण्डेय, भण्डारी, सिंह और सबसे बढ़कर सुलेमान के होते हुए उन्हें किसी बात की फिकिर नहीं। सब कुछ टिप-टॉप है। विवाह मंडप की ओर लौटते हुए एक नजर बिन्दा पर पड़ती है। देखकर भी नहीं देखते उधर। कानों में शहनाई, नगाड़े, पुलिस बैंड की धुनें और बीसियों तरह की गहमागहमी के शोर हैं।"[23]'धार' उपन्यास में विवाह का वर्णन-"एक साथ तीन शादियाँ पड़ जाना वैसे ही मुसीबत थी। खाटें, बिस्तर,

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

दरी, गलीचा, जाज़िम, हंडा, कंडाल, परसनी, नाई, कहार, पंडित, चाहिए तीनों के थे, मगर थे कहाँ?....ये वे दिन थे जब टेंट का धन्धा नहीं शुरू हुआ था, और अब सुखनंदन सिंह...।

"जुगाड़ हो गया सब कुछ?" जय ने पूछा।

"कहाँ ?हो जाए तो समझें।" उनका चेहरा लटक गया।

"लड़का कैसा है ? "

"है...! गृहस्थ है, कोई आइ. ए. एस. नहीं"।[24]

4. नाच के तरीके का वर्णन करते हुए संजीव सूत्रधार उपन्यास में लिखते हैं कि–"जब तुम नाच रहे हो, तो जौन बा कि तँहार सभे कुछ नाची, सभे कुछ ताल बताई। एक ताल समाजी माने बजवैया का तबला, ढ़ोलक, जोड़ी, सारंगी से निकरी, वही ताल जब देह की सारंगी से बाजे लागी, तब समसे (पूरी) देह धमकी...और दूनों ताल मिलकर एक...! फेन कुछना, ना आगे, न पीछे, न ऊपर, न नीचे, न दीन, न दुनिया ! बस तू रहब-अ और तोहार धुन रही।"[25]5. 'पाँव तले की दूब' उपन्यास में संजीव मेले का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि- "मनसा पुल पर कारखाने की चहारदीवारी से सटी हुई हाट थी। शाक-सब्जी, केकड़े, मिट्टी के बरतन, मुर्ग-मुर्गियाँ, बकरे-बकरियाँ और भेड़ें। पता लगा कि शनिवार को पशुओं की हाट लगा करती है यहाँ पर। आज बुधवार था, छोटी हाट ! यहाँ बेचने वाले आदिवासी थे, मुख्यतः औरतें। नवीनाओं ने ब्लाउज पहन रखे थे, लेकिन प्रौढ़ाओं के बदन पर सिर्फ़ मलिन साड़ियाँ ही थीं और खरीदने वाले प्रायः गैर आदिवासी। जगह-जगह मटमें भात की शराब और पकौड़े बिक रहे थे। मेले में आदिवासी लड़कियों की अलग भीड़ थी जो अपने ढ़ंग से उटंग कसे हुए पहनावे, जूड़े में चाँदी की लड़ियों से और इससे भी ज्यादा अपने उन्मुक्त चुहल

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

से अलग से पहचानी जा सकती थीं। इनका आकर्षण मुख्यतः मोटे चावल, ज्वार, बाजरा, कोदों, नमक, सरसों, और मिट्टी के तेल तथा पाउडर, चोटी, अलता, दर्पण, फीता, कंघा, नेलपॉलिश, गमछा, चोली, साड़ी और ब्लाउज की दुकानें थीं। यहाँ बेचने वाले दिकू थे।"[26]

6. छठ पर्व एक सांस्कृतिक पर्व है इसको मनाने के लिए आमतौर पर महिलाएँ होती हैं किन्तु बड़ी संख्या में पुरुष इस उत्सव का पालन करते हैं। यह पर्व स्त्री-पुरुष, बूढ़े-जवान सभी लोग मनाते हैं। इस त्योहार का महत्त्व दीपावली से बढ़कर होता है जैसा कि 'सूत्रधार' उपन्यास में संजीव ने लिखा है कि–"छठ जैसे पर्व के चलते भोजपुरी अंचल में दियरी का महत्त्व कम हो जाता है। फिर भी बरम्ह बाबा पर और शिवजी के मंदिर पर बारे गए दीये अभी भी जल रहे हैं।"[27]

7.दीपावली का त्योहार पूरे देश में मनाया जाता है। इस हर्षोत्सव पर परिवार के सभी सदस्य जहाँ कहीं भी रहते हैं अपने मूल गृह चले आते हैं। 'सावधान ! नीचे आग है' उपन्यास में संजीव लिखते हैं कि-"दीपावली हो और गृह-पति न हों, ऐसा कैसे संभव था ? सो बड़े दिनों के बाद माइनिंग-सरदार गजाधर सिंह भी उपस्थित हुए थे। उनकी पत्नी, यानी 'मंगतू' रोज़ की तरह घर सँभालने को आज भी हाज़िर था। बाकी घर के अन्य सदस्य की तरह मोहन यादव, शालिगराम दुबे, सूखन बाउरी आदि थे। आशीष पुरोहित की तरह बता रहा था, एक लैम्प उस छोर पर, एक इस छोर पर...जैसे एक दीप द्वार पर, एक दीप घूरे पर, एक दीप नाद पर, एक नेसुहे पर...एक फलाँ खेत में...।"[28]

संस्कृति और साहित्य दोनों मानवीय जीवन से संबंधित हैं या यों कहें कि दोनों एक सीमा पर जाकर एक बिन्दु पर मिलते हैं। इसलिए किसी भी साहित्य में जिस देश, जाति विशेष का वह साहित्य है उसमें उस देश, जाति व क्षेत्र की संस्कृति की अभिव्यक्ति अपनी सम्पूर्णता में होती है। साहित्य यदि मानव-जीवन का प्रतिविम्ब है तो संस्कृति समग्र मानव-

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

जीवन के चिंतन स्वरूप में साकार हो उठती है। लोकसंस्कृति उस समाज, साहित्य एवं लोक में प्रचलित रीति-रिवाज, परम्पराएँ, धर्म, लोकविश्वास, विवाह, लोककथाएँ, लोकगीत, लोकनृत्य, पर्व, उत्सव, त्योहार, खेल, खान-पान, वेश-भूषा, मेले इत्यादि में प्रतिबिम्बित होती है।

संजीव के उपन्यासों में रीति-रिवाज, विवाह एवं प्रथाओं का चित्रण किया गया है। एक तरफ जहाँ धर्म-कर्म लोक जनमानस के लिए अनिवार्य होते हैं वहीं दूसरी ओर लोक-गीत समाज के लोगों के मनोरंजन एवं एकजुटता बनाए रखने में सहायक होते हैं। लोक-संस्कृति किसी भी क्षेत्र की एकता बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है और यही क्षेत्रीय एकता राष्ट्रीय एकता रूप में विकसित होती है एवं किसी भी राष्ट्र की एकता उसकी संस्कृति की विशेषता होती है। संजीव उपन्यासों में क्षेत्रीय संस्कृति का चित्रण करते हैं। क्षेत्रीय संस्कृतियों से उस समाज को जानना आसान होता है। क्षेत्रीय संस्कृतियों को यदि किसी से भी खतरा है तो लोकजनमानस को उसकी सुरक्षा के लिए सावधान रहने की जरूरत है। लोक-संस्कृति के अंतर्गत जातीय संस्कृतियाँ भी हैं एवं जातीय संस्कृति के ह्रास के प्रति संजीव चिन्ता व्यक्त करते हैं साथ ही लोक-कलाकारों को यथोचित सम्मान मिल सके इसका आग्रह भी करते हैं। उनका 'सूत्रधार' उपन्यास लोक-सांस्कृतिक विशेषताओं के कारण विख्यात है। संजीव के उपन्यासों में वर्णित लोक-संस्कृति की अनेक विशेषताएँ हैं जो अनेक क्षेत्र की विशेषताओं से भी विशिष्ट व पृथक्हैं। ग्रामीण संस्कृति, ग्रामीण जन-जीवन का जैसा चित्रण संजीव के उपन्यासों में देखने को मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। संजीव के उपन्यासों में चित्रित लोक-सांस्कृतिक प्रसंगों में ग्रामीण-जीवन और परिवेश का चित्रण क्षेत्रीय सांस्कृतिक चेतना के समग्रस्वरूप का बोध कराता है।

-----0-----

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

संदर्भ सूचीः-

1. संजीव, फाँस, 2015, दिल्लीः वाणी प्रकाशन, पृ0- 161
2. संजीव, मुझे पहचानो, 2020, दिल्लीःसेतु प्रकाशन, पृ0-100
3. संजीव, रानी की सराय, 2009, गाजियाबादः रेमाधव प्रकाशन, पृ0- 46
4. संजीव, रानी की सराय, 2009, गाजियाबादः रेमाधव प्रकाशन, पृ0- 48
5. संजीव, जंगल जहाँ शुरू होता है, 2019,संस्करण चौथा, दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0- 15
6. संजीव, पुरबी बयार, 2021, नोएडाः सेतु प्रकाशन, पृ0-13-14
7. संजीव, अहेर, 2020, दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, पृ0-31
8. संजीव, पुरबी बयार, 2021, नोएडाः सेतु प्रकाशन, पृ0-19
9. वही0पृ0-21
10. वही0-पृ0-57
11. वही0-पृ0-57-58
12. वही0-पृ0-59
13. वही0-पृ0-69
14. वही0-पृ0-78-79
15. वही0-पृ0-81
16. वही0-पृ0-82
17. वही0-पृ0-101
18. वही0-पृ0-107
19. वही0-पृ0-130

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 2, (April-June 2022

20.वही0-पृ0-131

21.वही0-पृ0-188

22.संजीव, फाँस, 2015, दिल्लीः वाणी प्रकाशन, पृ0-125

23.संजीव, जंगल जहाँ शुरू होता है, 2010, दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0- 37

24.संजीव, अहेर, 2020, दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, पृ0-89

25.संजीव, सूत्रधार, 2003, दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0-110

26.संजीव, पाँव तले की दूब, 2005, वाग्देवीः प्रकाशन, पृ0-48-49

27.संजीव, सूत्रधार, 2003, दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0-88

28.संजीव, सावधान नीचे आग है, 2018, दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ0- 145-46